ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 57-60
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

समकालीन महिला उपन्यासकार : स्त्री संवेदना और अस्मिता के स्वर

अमृता राय

शोध अध्येत्री– हिंदी विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ0प्र0), भारत

Received-06.04.2023, Revised-10.05.2023, Accepted-14.04.2023 E-mail: aaryvart2013@gmail-com

सारांश: ***पिछले कुछ दशकों से स्त्री–लेखन ने निश्चित रूप से कुछ ऐसे तीखे, ज्वलंत अंतर्विरोधी, विरोधाभाषी, प्रश्नों को सामने रखा है, जिससे महिला–लेखन की एक अलग पहचान बनती शुरू हुई है। कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, मृदुला गर्ग जैसी लेखिकाओं की रचनाओं में स्त्री–लेखन की एक अलग पहचान सामने आयी है। यह परिवर्तन इसी कुछ दशक में सर्वाधिक आया है क्योंकि इनके लेखन में स्त्री के अधिकारों के प्रति सजगता, आक्रमकता, तीखापन व पैतृक समाज की कड़ी आलोचना हुई। इस तरह के तेवर पिछले दशकों में स्त्री–लेखन में कमजोर थे। शुरूआती दौर में स्त्री–लेखन में स्त्री की परम्परागत छवि ही उभरी थी। उनके लेखन में मानवीय सम्बन्धों का निरूपण तो था किन्तु उनके पीछे जो राजनैतिक दृष्टि, विचारधारा, पितृसत्तात्मक नैतिक मूल्य काम करते हैं, उन पर विचार नहीं किया जाता था लेकिन लेखिकाओं का मानना है कि कोई भी रचना इन पितृसत्तात्मक नैतिक मूल्यों, धर्म, परिवार से मुक्त या तटस्थ नहीं होता। उसमें निहित मानवीय सम्बन्धों में पैतृक सामाजिक मर्यादाएं ही छिपी रहती हैं। यहीं से स्त्री लेखन का प्रश्न नये रूप में सामने आता है।***

कुंजीभूत शब्द– ज्वलंत अंतर्विरोधी, विरोधाभाषी, रचनाओं, सजगता, आक्रमकता, तीखापन, पैतृक समाज, आलोचना, विचारधारा।

महादेवी वर्मा ने चौथे दशक में श्रृंखला की कड़ियाँ में भारतीय समाज की स्त्री की समस्याओं को उद्घाटित करके यह सिद्ध किया कि वे स्त्री के संतप्त व अभिशप्त जीवन के प्रति कितनी चिन्तित थीं। किन्तु उन्हें रहस्यवादी कहकर उनके लेखन की सामाजिक दृष्टि की उपेक्षा ही की गई। वास्तव में स्वतंत्रता से पूर्व और बाद में महिला लेखन के तेवर में निश्चित ही बड़ा अन्तर है। स्वतंत्रता से पहले की सुभद्रा कुमारी, महादेवी वर्मा जैसी लेखिकायें प्रत्येक सामाजिक रचनात्मक आन्दोलन में बराबरी के स्तर पर देखी गईं। अपने समय के सभी जोखिम को उठाया, किंतु आज हम दो मुहें मानदंड वाले समाज में रहते हैं। यह भी विचित्र विडंबना है कि हमारे पितृसत्तात्मक समाज के मानदंड दोहरे हैं। इस समाज में स्त्री–लेखन की अपनी चुनौतियाँ होती हैं, स्त्री जब लिख रही होती है तो कहा जाता है कि स्त्री–लेखन में स्त्री पुरुष सम्बंधो,परिवार के बिखराब की ही अभिव्यक्ति होती है, वह भी अत्यंत सीमित व सतही रूप में। क्या यह सच नहीं है कि परिवार और स्त्री–पुरुष संबंध भी हमारे जीवन का कटु यथार्थ है? प्रश्न यह नहीं कि स्त्री–लेखन घर, परिवार, बच्चे दाम्पत्य सम्बंधो के सीमित दायरों में बटा हुआ है, बल्कि प्रश्न तो यह है कि घर, परिवार, स्त्री–पुरुष सम्बंधो के पीछे सदियों से काम कर रही पितृसत्तात्मक समाज को किस प्रकार समझ रही, देख रही व दिखा रही? सूर्यबाला कहती हैं कि "अनुभव तो यही कहता है कि लेखिकाओं का क्षेत्र अधिकतर घर और नारी मन रहा है जबकि पुरुष का घर बाहर दोनों, लेकिन हम इस क्षति की पूर्ति भी कर लेती हैं– नारी मन की अथाह गहराईयों में बैठकर और इतना तो मैं दावे के साथ कह सकती हूँ कि नारी के अन्दर इतने गूढ़ तिलिस्म गुफाएं और प्राचीर है कि उन्हें भेद पाना आसान नहीं है, जितनी सत्यता से नारी भेद सकती है, पुरुष नहीं।"[1]

वास्तव में कौन लिख रहा है और किस विषय पर लिख रहा है, दोनों में जब समन्वय होगा तभी कोई खाँचा निर्धारित किया जा सकता है, अन्यथा पुरुष रचनाकारों द्वारा भी स्त्री विषयक विषयों पर लिखे गये लेखन को महिला लेखन के अन्तर्गत शामिल न करना उचित नहीं है। अक्सर ऐसा माना जाता है कि महिला लेखन यानी महिला लेखिकाओं द्वारा स्त्री केन्द्रित लेखन। देखा जाये तो "स्त्री जब साहित्य लिखती है, स्त्रियों के बारे में ही लिखती है और पुरुष जब साहित्य लिखता है तब भी स्त्रियों के सम्बन्ध में ही लिखता है। दोनों में अन्तर यह होता है कि स्त्री के लिखने का उद्देश्य है अपने विषय में फैले हुए भ्रम का निवारण करना और पुरुष का उद्देश्य है, उसके विषय में और भी भ्रम पैदा करना।"[2] स्पष्ट है स्त्रियों के बारे में महिला रचनाकारों व पुरुष रचनाकारों द्वारा पर्याप्त लेखन कार्य हुआ किन्तु महिला–लेखन के अन्तर्गत हम महिलाओं द्वारा महिला के बारे में लिखे गए साहित्य को ही सिर्फ शामिल करते हैं न कि पुरुष रचनाकारों द्वारा स्त्रियों के बारे में लिखे साहित्य को। इसका कारण स्पष्ट है कि स्त्रियों द्वारा रचित साहित्य स्त्री जीवन से जुड़े पहलुओं को उद्घाटित ही नहीं करती बल्कि अपने निजी स्त्री जीवन में घटने वाली घटनाओं को भी यथार्थ के धरातल पर प्रतिष्ठित करती हैं।

महादेवी वर्मा का मानना है कि "पुरुष के द्वारा नारी का चरित्र अधिक आदर्श बन सकता है, परन्तु अधिक सत्य नहीं, विकृति के अधिक निकट पहुँच सकता है, परन्तु यथार्थ के अधिक समीप नहीं। पुरुष के लिए नारीत्व कल्पना है, परन्तु नारी के लिए अनुभव। अपने जीवन का जैसा सजीव चित्र वह हमें दे सकेगी, वैसा पुरुष बहुत साधना के उपरांत भी शायद ही दे सके।"[3] इसलिए पुरुष न तो स्त्री के मन की गहराई तक पहुँच सकता है, न ही उनकी वेदना को अभिव्यक्त कर सकता है। वास्तव में देखा जाये तो पिछले बीस वर्षों में समकालीन महिला उपन्यास लेखन अत्यन्त समृद्ध हुआ है। कृष्णासोबती, मन्नू भण्डारी, ममता कालिया, शशिप्रभा शास्त्री, चित्रा मुद्गल, सूर्यबाला, सुधा अरोड़ा, नासिरा शर्मा, मैत्रेयी पुष्पा, अलका सरावगी, मधु कांकरिया, चन्द्रकांता जैसी अनेक उपन्यास लेखिकाओं ने बहुमूल्य लेखन कार्य किया है।

कृष्णा जी अपनी संयमित अभिव्यक्ति व साफ–सुथरी रचनात्मकता के लिए प्रसिद्ध हैं। इनके रचनात्मक पात्र किसी भी प्रकार की कुंठा या वर्जना से मुक्त नदी की तरह चंचल भाव से जीने के पक्षधर हैं। "कृष्णा सोबती की स्त्री कामनाओं से संचालित हैं। वह पोर–पोर तृप्ति में डूब जाना चाहती हैं। स्थूल दृष्ट से देखने पर लगता है, उसकी सारी सोच शरीर के इर्द–गिर्द सिमटी है। उसका ध्येय है शारीरिक तृप्ति, भले ही वह दबंग मित्रों हो या.....गुमसुम स्त्री।.....लेकिन आत्मलीनता का अर्थ आत्मविस्मृति कतई

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

नहीं। कृष्णा सोबती' की स्त्री चैतन्य है–अपने पति और जीवन के प्रति।"[4] कृष्णा जी स्त्री को देह से जुड़े सत्यों को बारीकी से उद्घाटित करती रही हैं। दिलोदानिश उपन्यास में लेखिका ने कुटुम्ब, महक, छुन्ना का दर्द व विद्रोह को रूपायित किया है। कृष्णा सोबती की रचनाओं को सेक्स भरी रचना कहकर आलोचकों द्वारा विरोध भी होता रहता है किन्तु इस तरफ ध्यान न देकर बेबाकी से अपनी रचना करती रही। इनकी स्त्रियाँ घूंट–घूंट कर जीवन जीने वाली नहीं है, बल्कि विद्रोही होकर समाज को चुनौती देती रही हैं। वहीं मृदुला गर्ग के उपन्यासों में भी स्त्री जीवन की विडम्बना व उसके सर्जनात्मक व्यक्तित्व की खोज की गयी है। इन्होंने अपने उपन्यासों में स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों व उससे उत्पन्न तनावों को प्रस्तुत किया है। "मृदुला गर्ग ने अपनी पहचान अभिजात वर्गीय नारी के स्वातंत्र्य, प्रेम–विवाह, वैवाहिक जीवन की एक रसता, ऊब, ताजगी के तलाश में पर पुरुष की ओर झुकाव तथा प्रेम की अनुभूति के सूक्ष्म विश्लेषण के माध्यम से मानव जीवन की सार्थकता की तलाश द्वारा बनायी थीं।"[5] चित्त कोबरा, अनित्य, मैं और मैं, कठगुलाब आदि उपन्यासों में मृदुला गर्ग ने औरत के सर्जनात्मक व्यक्तित्व की खोज की है।

स्त्री मुक्ति की अवधारणा के अनेक रूप है और सभी रूपों का चित्रण समकालीन लेखिकाओं के उपन्यासों में प्राप्त होते हैं। स्त्री मुक्ति का सवाल प्रमुख रूप से स्त्रियों की आर्थिक निर्भरता की मांग करता है। आर्थिक स्वावलम्बन के अभाव में स्त्री स्वतंत्र नहीं हो सकती है। एक तरफ आर्थिक रूप से सुदृढ़ स्त्री को चित्रित करती दिखाई देती हैं दूसरी तरफ उनके मार्ग में आने वाली कठिनाईयों को भी रेखांकित किया है।

मृदुला गर्ग ने महिला उपन्यास–लेखन को विशिष्ट पहचान की है। इन्होंने पुरुषों के पाश्विक बर्ताव के विरूद्ध औरत की निजता की रक्षा के लिए संघर्ष किया है। स्त्री अपने अधिकारों को समझते हुए सामाजिक–राजनीतिक समानता की माँग कर रही है। मृदुला गर्ग की स्त्रियाँ निर्भीक, विवेकी, ईमानदार, जीवन के प्रति संतुलित दृष्टिकोण रखने वाली हैं। इनका 'कंठगुलाब' सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। यह स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों के ऊसर होते चले जाने का त्रासद कथा है, जिसके एक तरफ अपूर्ण व अतृप्त मातृत्व से उपजा अवसाद व दूसरे तरफ उस अवसाद को धो डालने के सजग प्रयास। इसमें मारियान, स्मिता, नर्मदा, असीमा ये चार स्त्री पात्रों के जरिये पाश्चात्य व भारतीय समाज में स्त्रियों के शोषण को उजागर किया है। "कठगुलाब 'सार्वभौम भगिनीवाद' (यूनिवर्सल सिस्टर हुड) और पर्सनल इज पोलिटिकल के आदर्श से प्रभावित, बड़ी उठान का उपन्यास है। पूरब और पश्चिम, दोनों औरत के दैहिक, मानसिक और बौद्धिक शोषण के जो महीन चक्र लगातार चलते रहे हैं, उनका सामना स्त्रियाँ अपने आत्मिक बल और आपसी संगठन से कैसे कर रही हैं– इसकी एक स्पष्ट झलक उपन्यास में मिलती है।"[6] इस शोषण से मुक्ति का मार्ग आखिर में क्या है? मृदुला जी की स्त्रियाँ 'स्त्रीत्व' से मुक्ति नहीं चाहती, न ही पुरुषों के साहचर्य से। बल्कि इनकी स्त्रियाँ इस पितृसत्तात्मक समाज में सामाजिक–राजनीतिक–आर्थिक रूप से बराबरी चाहती हैं।

मन्नू भण्डारी ने स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में होने वाले बदलाव, तनाव, उसके टूटने की पीड़ा को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। मन्नू जी 'आपका बंटी' के माध्यम से ये दिखाने का प्रयास किया है कि आधुनिक समाज में जहाँ स्त्री–पुरुष अपने सम्बन्धों से असंतुष्ट होने पर स्वतंत्र निर्णय लेने में सक्षम हैं किन्तु उनके बीच में अगर कोई बच्चा है तो उसकी मनःस्थिति का वर्णन कोई नहीं करता। इस उपन्यास में पति–पत्नी के तलाक हो जाने पर बच्चें की मनःस्थिति को उजागर किया गया है। लेखिका ने बच्चे, पत्नी और पति तीनों की मानसिकता चित्रित करते हुए बच्चें के जीवन की अनिश्चितता और उसकी ट्रेजेडी का अहसास उभारा है। वहीं मैत्रेयी पुष्पा का रचना संसार व्यापक है। इन्होंने सिर्फ स्त्री–पुरुषों सम्बन्धों तक सीमित न होकर नारी जीवन के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सभी क्षेत्रों में उसके पहल की कथा प्रस्तुत करी है। 'इदन्नमम' में लेखिका स्त्री के प्रति नये दृष्टिकोण को चित्रित करती है। इस उपन्यास की पात्र मंदा पिता के सपनों को साकार करने वाली साहसी स्त्री है। पिता के मृत्यु के बाद वह अकेली हो जाती है, फिर भी जिंदगी से हार नहीं मानती है। इदन्नमम मंदा के जरिए औरत के भीतर दूर तक सिरजे इस जटिल संसार से दो–चार होने की कोशिश है। देह के रास्ते औरत के मन के हौसले और बुद्धि को दहलाने, कुचलने और बरगलाने वाले पुरुष समाज की बदनीयतियों को उघाड़ने की चुनौती है। समकालीन लेखिकाओं ने स्पष्ट किया है कि स्त्रियाँ सिर्फ वस्तु नहीं है, वे भी इंसान हैं जिसकी अपनी इच्छाएं हैं। मैत्रेयी जी ने अपने उपन्यासों में पात्रों के माध्यम से स्त्री चेतना का नया आयाम प्रस्तुत किया है।

हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में समकालीन उपन्यास लेखिकाओं की उपलब्धियों को पुरुष आलोचकों ने भी स्वीकार किया है। डॉ0 रामदरश मिश्र जी लिखते हैं कि – "महिला लेखिकाओं द्वारा इधर जो उपन्यास लिखे गए हैं, उनका विशेष महत्व है। उन्होंने अपने अनुभवों के आधार पर आज की नारी की सामाजिक नियति और मानसिकता को बड़ी गहराई से उभारा है न तो ये लेखिकाएं पुरुष लेखकों की तरह नारी को महिमान्वित करती हैं और न ही उन्हें नकली रूप में पीड़ित। अपनी समूची परिणतियों के साथ एक विशेष दायरे की, आज की जो नारी है, उसकी पहचान उभारती है।"[7] यहाँ विशेष दायरे पर सवाल खड़ा किया जा सकता है, क्योंकि इन लेखिकाओं ने अपने उपन्यासों में किसी दायरे तक सीमित नहीं रखा है।

समकालीन महिला लेखिकाओं ने अपने पूर्व महिला लेखन की सीमाओं और संकीर्ण दायरे को महसूस किया है। वे समझ गई हैं कि उनमें भावुकता और आदर्श का अधिक मिश्रण है और सिर्फ भावुकता इस युग की माँग पूरा करने में सक्षम नहीं है। अब जीवन तीव्र गति से परिवर्तित हो रहा है, केवल प्यार–मोहब्बत, शादी–विवाह, परिवार, बच्चे ही जीवन के लिये काफी नहीं हैं, इसके साथ कुछ और भी चाहिए क्योंकि औरत केवल शरीर मात्र नहीं है। इन लेखिकाओं ने अपने लेखन के द्वारा सोई हुई स्त्री की चेतना को झकझोर डाला है। आज महिलाएं पहले से अधिक निर्भीक, स्वावलम्बी, अधिकार–चेतना अस्मिता व अस्तित्व के प्रति सजग व संवेदनशील दिखाई देती हैं।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

समकालीन महिला उपन्यास लेखन में स्त्री न प्रभुता की चाहत रखती हैं न प्रभुत्व की बल्कि यह तो अपना सोया हुआ 'स्वत्व' अस्तित्व की चाह रखती हैं। अपनी स्वतंत्रता की चाह रखती हैं। हिन्दी में समकालीन लेखिकाओं ने अपने उपन्यासों में स्त्री अस्मिता स्त्री स्वतंत्रता जैसे प्रश्नों को बड़ी संजीदगी के साथ विचार किया है, साथ ही स्त्री स्वतंत्रता के स्वरूप को अपने उपन्यासों के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयास भी किया है। स्त्री का केवल आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो जाना या स्वतंत्र होकर निर्णय लेने में उसकी अस्मिता नहीं है। 'स्त्री–अस्मिता' से आशय पुरुष के समान स्त्री को समान अधिकार, स्त्री के प्रति विवेकमूलक दृष्टिकोण तथा स्त्री द्वारा पुरुष वर्चस्व का प्रतिरोध से है। सही अर्थों में स्त्री–अस्मिता का तात्पर्य स्त्री के प्रति समाज के दृष्टिकोण व मानसिकता में बदलाव से है जिसमें स्त्री का खुद का दृष्टिकोण भी शामिल हो।

समकालीन महिला उपन्यास–लेखन एक प्रकार से स्त्री की अस्मिता की खोज का लेखन कहा जा सकता है। जहाँ आज की जागृत स्त्री अपनी अस्मिता को सर्वोपरि मानती है। वहीं समाज में कुछ ऐसी भी स्त्रियाँ हैं जो अपनी स्वतंत्रता के नाम पर पुरुषों का ही अनुकरण करती दिखाई देती हैं।

चित्रा –मुद्गल स्त्री–जीवन की सभी गतिविधियों को चित्रित करते हुए 'एक जमीन अपनी' उपन्यास में आधुनिक समाज में स्त्री–स्वातंथ्य को प्रश्नांकित करते हुए दिखाई देती हैं ।जहाँ नीता के विचार में पुरुषों का अनुकरण करना ही स्वतंत्रता है। उसका मानना है कि पुरुष अपने मन के मुताबिक जी सकता है तो स्त्री क्यों नहीं? किंतु अंकिता इस प्रकार के अनुकरण के विरुद्ध है। वह कहती है "औरत जरूर अपने मन को महत्व दे ,लेकिन मर्द बनकर नहीं ...तुम्हारा स्त्री–समानता का दृष्टिकोण मर्द बनना है?...मर्दों की भाँति रहना ...वे समस्त आचार –व्यवहार ,व्यवस्थाएं अपनाना ...यही समानता का दृष्टिकोण है? स्त्री को समाज में समान अधिकारों के नाम पर इन्हीं उच्छृंखलताओं और अनुशासनहीनता की चाह है। अंकिता के अनुसार स्त्री की लड़ाई इस दोषग्रस्त व्यवस्था से होनी चाहिए जो स्त्री को रूढ़ियों में जकड़कर रख दिया है न कि पूरे पुरुष जाति से।...स्त्री की मुक्ति स्त्रीत्व के गुणों को बरकरार रखकर ही प्राप्त करनी चाहिए।...स्त्री को स्त्रीत्व से मुक्ति नहीं चाहिए ,उन रूढ़ियों से मुक्ति चाहिए जिन्होंने उसे वस्तु बना रखा है।"[8]

मृदुला गर्ग का उपन्यास 'कठगुलाब' की मारियान और स्मिता के मन में भी पुरूष बनने की चाह बिल्कुल नहीं है। वे दोनों अगले जन्म में भी स्त्री ही होकर जीना चाहती हैं। स्मिता कहती है –"औरत, औरत के साथ अन्याय क्यों करती है, वह सोच रही थी, क्या उसके मूल में पुरुष ईर्ष्या नहीं रहती? वह पुरुष होना चाहती है, इसलिए समर्थ होते ही, दूसरी स्त्रियों पर अपने उधार के पौरुष का रोब जमाने लगती है।...आजादी की गुहार मचाती है तो मर्द से, समाज, इतिहास और मानव जाति की सड़ी–गली, युगों से चली आ रही मान्यताओं से नहीं।"[9]

नासिरा शर्मा के 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास में महरुख की 'अस्मिता' सिर्फ पुरुष के प्रति विरोध पर टिकी नहीं है अर्थात उसके मन में पुरुष जाति के प्रति नफ़रत का भाव नहीं है। देखा जाए तो औरत की जिंदगी से जुड़ें सारे करीबी रिश्ते पुरुष से ही होते हैं। पिता, भाई, पति, प्रेमी, बेटा जैसी अहमियत को नकार कर औरत कहाँ जाएगी लेकिन रिश्ता बराबरी की जमीन पर न बना हो तो हमेशा परेशानी होती है। मर्द जाति बहुत बुरा होता है, उनसे किसी भी प्रकार की हमदर्दी नहीं रखनी चाहिए ,ऐसे विचारों को वह अस्वीकार करती है। उसका मानना है "मर्द न हमारा दुश्मन है, न हरिफ–वह हमारी तरह का इंसान है। मानती हूं औरतों की तकलीफें बेशुमार है, मगर मर्द कब अपनी उलझन से आजाद है?...मर्दों को हम जज्बाती नजर से न देखकर उन्हें व्यवहारिक तौर पर देखें तो शायद हम उनकी कुंठाओ की गिरहें खोल सकें और उन्हें बहुत कुछ समझा सकें।"[10] महरूख के मन में पुरुष का आवरण पहनने का मोह नहीं है। वह न पुरुष बनना चाहती है और न पुरुष को औरत बनाना चाहती है। वह कहती है– "हमारी लड़ाई अपनों से संघर्ष की लड़ाई है, यानी भूमिगत ,अपने अंदर अपने से समझने और मजबूत बनाने की। हमें मर्द नहीं बनना है, न ही मर्द को औरत बनाना है।"[11] नासिरा शर्मा स्त्री–पुरुष को खांचे में बांटकर किसी एक वर्ग विशेष का समर्थन करने के विरुद्ध दिखाई देती हैं।

ये सच है कि स्त्री मुक्ति का तात्पर्य पुरुष हो जाना या पुरुषोचित गुणों को स्वीकार करना कदापि नहीं है ।स्त्री की अपनी मान्यताएं है, किंतु आज का पढ़ा–लिखा विचारशील होने का दावा करने वाला स्त्री समाज क्या स्त्री स्वतंत्रता, स्त्री समानता और उसके मानवीय अधिकारों की लड़ाई लड़ता हुआ जानता है कि स्त्री क्या चाहती है? स्त्री जो कई हजारों साल से पराधीन रही अब वह हर प्रकार की स्वतंत्रता का अनुभव कर रही है लेकिन क्या सभी स्त्रियों को पता है कि वे अधिकार वस्तुतः क्या हैं ? कैसे होना चाहिए? किस रूप में होना चाहिए और उसकी सामाजिक छवि कैसी हो ?

आज सभी जगह तो उन बंधनो से अवगत कराया जा रहा है जो स्त्री होने के कारण उन पर स्वाभाविक रूप से लागू होते हैं लेकिन "स्वाधीन होने के बाद क्या स्त्री भी अंधी महत्वकांक्षा की उस कपट दौड़ में शामिल हो जाये, जिसका नाम आधुनिक सभ्यता है? स्त्री बाजार में पैर रखते ही बाजारू बना दी जाती है, कौन निर्धारित करता है?"[12]

इस उपभोक्तावादी समाज में स्त्री शोषण के नये–नये तरीके हमारे सामने प्रकट होने लगे हैं। एक वक्त था स्त्रियों का शोषण धर्म, जाति, लिंग, राजनीति के नाम पर होता था किंतु बदलते दौर में आज स्त्री का शोषण आधुनिकता के नाम पर हो रहा है। आधुनिकता के नाम पर आज स्वतंत्रता के गलत प्रतिमानों को औरत के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है। 'एक जमीन अपनी 'उपन्यास में लेखिका ने नीता को एक दिग्भ्रमित स्त्री के रूप में प्रस्तुत किया है। जो अपनी निजी समृद्धि, ख्याति और सफलता की चकाचौंध में यह भूल जाती है कि उस जैसी स्त्री के कर्मो का समाज पर क्या असर होता है। रातों–रात नम्बर वन मॉडल बनने की चाह में वह नग्न होकर विज्ञापन फ़िल्म में काम करती है और अपने इस काम को वह साहस, स्वाधीनता व आधुनिकता का नाम देती है। नीता के रूप में चित्रा मुद्गल इस बात की ओर संकेत करती हुई दिखाई देती हैं कि आधुनिकता की जिस परिभाषा में स्त्री जी रही है या जीना चाहती है, दरअसल

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

यह परिभाषा –"अधिकार, आधुनिकता, समानता और स्वतंत्रता के नाम पर पुरुषों द्वारा ही अखबारों, पत्रिकाओं, विज्ञापनों, फिल्मों के माध्यम से स्त्री को सौंपी जा रही है ...बड़ी चतुरता से काया कल्प के बहाने जिंस को जिंस बनाये रखने का षड्यंत्र। स्पष्ट है, स्त्री को आगे भी अपने अधीन बनाये रखने के सामंती इरादों को वह इन हथकंडों से सिद्ध कर रहा है।"[13] चित्रा मुद्गल का उपन्यास स्त्री–चेतना के रूप में एक नयी सोच प्रदान करता है।

वहीं नासिरा शर्मा के उपन्यास 'शाल्मली' की नायिका शाल्मली जो एक पढ़ी–लिखी शिक्षित, आर्थिक रूप से सुदृढ स्त्री अपने पति नरेश से मानसिक प्रताड़ना झेलने के पश्चात भी तलाक लेना उचित नहीं समझती है ।उसका मानना है कि तलाक जैसे अधिकार को सोच–विचार के बाद ही इस्तेमाल करना चाहिए ।वह सरोज से कहती है "सम्बंध तोड़ना उतना आसान नहीं होता है, जितना तुम लोग मशीनी रूप से उसे सरल समझती हो। समाज बदलना तो दूर नारी स्वंय अंदर से अपने को नहीं बदल पाती।...उसे लेकर वह कहां जायेगी? आपके इसी रुढ़िवादी अंधे समाज में भटकेगी?[14] नासिरा शर्मा शाल्मली के माध्यम से समाज में प्रतिष्ठित शिक्षित व विवेकशील विचारों वाली स्त्री की सामाजिक समस्याओं को चित्रित करने के साथ उससे उबरने की राह भी सुझाई है। स्त्री–स्वातन्त्र को एक नए रूप में लेखिका ने चित्रित किया है।

अतः समकालीन लेखिकाओं के लेखन में एक परिपक्व दृष्टि के माध्यम से स्त्री अस्मिता के प्रश्न यहाँ नए रूप में उभरकर सामने आए हैं। आज महिला रचनाकार एक बड़े बदलाव के साथ अपने विचारों को व्यक्त कर रही हैं। सिर्फ देह मुक्ति को ही विमर्श का फार्मूला और मुद्दा न मानकर ये लेखिकाएं बौद्धिक रूप से अधिक गंभीर, सक्षम तथा सामाजिक–राजनैतिक दृष्टि से ज्यादा सचेत व परिपक्व है। इनके उपन्यास–लेखन में एक तरफ स्त्री मन की व्यथा और त्रासदी का जीवंत चित्रण है तो दूसरी तरफ स्वप्नों और आकांक्षाओं का संकल्प और संघर्ष भी उतना ही विशिष्ट है। अपने समय और जीवन के अंतर्विरोधों, जटिलताओं और द्वन्दों के भीतर से आत्मविकास और अस्तित्व की संभावनाओं को चुनकर अपनी मानवीय पहचान के लिए पूरी सामाजिक–व्यवस्था को फिर से प्रश्नांकित करना,समकालीन लेखिकाओं के उपन्यास–लेखन की विशेष उपलब्धि है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, ओमप्रकाश : समकालीन महिला कथा लेखन, 2002, पूजा प्रकाशन एवं खामा पब्लिकेशन, दिल्ली, पृष्ठ 26.
2. राजवार, शीला–महिला उपन्यास : मूल्य चेतना,1990, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, पृष्ठ 4.
3. वर्मा, महादेवी : श्रृंखला की कड़ियाँ, 1995, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 74.
4. अग्रवाल, रोहिणी : स्त्री–लेखन : स्वप्न और संकल्प, 2011, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 159–160.
5. तिवारी, रामचंद्र : हिंदी का गद्य साहित्य, नवम संस्करण 2014, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 265.
6. अनामिका : स्त्रीत्व का मानचित्र, 2020, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 202.
7. मिश्र, रामदरश : हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, सांतवा प्रकाशन 2016, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 185.
8. मुद्गल, चित्रा : एक जमीन अपनी, 1990, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 200.
9. गर्ग, मृदुला : कठगुलाब, 1996, ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 105.
10. शर्मा, नासिरा : ठीकरे की मंगनी, 2014, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 179.
11. वही, पृष्ठ 181.
12. राजकिशोर : स्त्री के लिए जगह, 2017, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 6.
13. मुद्गल, चित्रा : एक जमीन अपनी, वही, पृष्ठ 116.
14. शर्मा, नासिरा : शाल्मली, 1994, किताबघर, नई दिल्ली, पृष्ठ 157.

*****